|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

## || श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

**अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग**

2/2 (श्लोक 11-27), शनिवार, 26 जुलाई 2025

**विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी**

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/QdZaYU1OL4k

# त्रिगुणात्मक से गुणातीत का अभ्यास

हमारी सनातन परम्परा के अनुसार सबसे पहले गुरु वन्दना की जाती है क्योंकि गुरु की कृपा के बिना इस प्रकार का विवेचन सम्भव नहीं है। विगत दिनों गुरुपूर्णिमा का पर्व भी था। वर्तमान समय में पूज्य स्वामीजी ऋषिकेश में हैं। वहाँ इक्कीस दिन की श्रीमद्भगवद्गीता की कथा चल रही है और उसी के बीच में आप सब लोगों से संवाद करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

पूज्य स्वामीजी सहित समस्त गुरु परम्परा का स्मरण करते हुए विवेचन सत्र का आरम्भ हुआ।

आप सभी गीताजी के साधक हैं। यह हो सकता है कि साधना के इस मार्ग पर कोई दसवें पायदान पर हो और कोई पाँचवें पायदान पर हो किन्तु सभी साधक ही कहलाते हैं।

महाराष्ट्र में एक परम्परा है कि जब यहाँ अखण्ड हरिनाम सप्ताह का आयोजन किया जाता है तो सेवी चौबीस घण्टे अपने हाथ में वीणा लेते हैं और हरिनाम सङ्कीर्तन करते रहते हैं। वारकरी सम्प्रदाय की यह पद्धति रही है कि वीणा के आदान-प्रदान के समय जो वीणा धारण करता है, वह एक घण्टे तक हरिनाम-स्मरण करने के उपरान्त अगले व्यक्ति को वीणा प्रदान करता है तो वीणा ग्रहण करने वाला व्यक्ति एक घण्टे तक वीणा धारण करने वाले व्यक्ति का प्रणिपात करता है। वीणा प्रदान करने के पश्चात वह व्यक्ति भी वीणा धारण करने वाले व्यक्ति के चरण-स्पर्श करके, दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता है। एक-दूसरे को प्रणाम करने की यह विधा हमारी विशेषता है।

चौदहवें अध्याय का उत्तरार्द्ध चल रहा है। हमने गत सप्ताह प्रथम दस श्लोक देखे थे उनकी पुनरावृत्ति करते हुए अब हम ग्यारहवें श्लोक से आगे बढ़ेगें।

श्रीभगवान् ने तीन गुणों के योग के विषय में बताया है। गत् सप्ताह आपने इन तीन गुणों के विषय में जाना कि एक तमोगुण होता है, एक रजोगुण होता है तथा एक सत्वगुण होता है। आत्मा ऊर्ध्वगामी है। ऊर्ध्वगामी का अर्थ होता है ऊपर की ओर बढ़ने वाला। जैसे हम कभी-कभी बच्चों के लिए गैस का गुब्बारा खरीद लेते हैं। वह गुब्बारा ऊपर उठता रहता है इसलिए हम उसे अपने वाहन के हैंडल में बाँध देते हैं तथा उसे घर ले आते हैं।

जिस प्रकार गुब्बारे की प्रवृत्ति ऊपर उठते रहने की होती है और उसे बाँधकर रखना पड़ता है, उसी प्रकार मानव देह में जो-जो

जीव जन्म लेते हैं, वास्तव में वे समस्त जीव पिछले जन्म में सत्त्वगुणी थे तभी उन्हें मानव-देह प्राप्त हुई। इन तीनों गुणों का समन्वय प्रत्येक जीव में होता है। तभी जीव पृथ्वीतल पर रह पाता है। यदि हमारे अन्दर ये तीनों गुण नहीं हैं, जैसे मान लेते हैं कि हमारे अन्दर से तमोगुण पूर्णतः समाप्त हो जाए और हम पूरी तरह से सतोगुणी बन जाएँ तो भी हमारा जीवन कठिन हो जाएगा क्योंकि रात्रिकाल में तमोगुण के कारण ही हमें निद्रा आती है और यदि सही मात्रा में तमोगुण न हो तो भी हम जी नहीं पाएँगे। अनेक व्यक्तियों को निद्रा न आने का रोग होता है तो वे पूरी रात्रि बेचैन रहते हैं और अनेक प्रकार की औषधि लेते हैं।

इसी प्रकार सही मात्रा में रजोगुण न होने पर हमारा कुछ करने का मन ही नहीं करेगा। रजोगुण हमें नियत समय पर प्रत्येक कार्य करने के लिए प्रवृत्त करता है।

रजोगुण के कारण ही हम जीवन उन्नत बनाने के स्वप्न देखते हैं और उन्हें पूरा करने के लिए प्रवृत्त हो जाते हैं।

यदि हमारे जीवन से सत्त्वगुण ही समाप्त हो गया तो हमारा सर्वनाश ही है क्योंकि हम मनुष्यता से गिर जाएँगे। सत्त्वगुण मनुष्यता का महत्त्वपूर्ण गुण है इसीलिए हमारे शरीर में इन तीनों गुणों का समन्वय आवश्यक है क्योंकि हम केवल परमात्मा की सन्तान नहीं हैं अपितु प्रकृति की भी सन्तान हैं। परमात्मा तथा प्रकृति, दोनों के मिलन से हमारा शरीर तैयार होता है। इसमें परमात्मा का अंशमात्र गुण आत्मा के रूप में है जबकि पञ्च महाभूतों से बना हमारा पूरा शरीर, अर्थात् हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ, पञ्चेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहङ्कार आदि सब हमें प्रकृति से प्राप्त हुआ है। यह प्रकृति त्रिगुणात्मक है तथा प्रकृति से ही ये तीनों गुण हमारे अन्दर आये हैं। जिस प्रकार तीन ऋतुओं में से एक ऋतु न आये तो हमारे लिए कठिनाई उत्पन्न हो जाएगी, उसी प्रकार ये तीनों गुण भी हमारे लिए उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं किन्तु उनमें सन्तुलन अनिवार्य है । हमारे अन्दर प्रत्येक गुण सही मात्रा में ही बना रहना चाहिए।

गैस के गुब्बारे की ही भाँति हमारी आत्मा भी विमुक्त होने के लिए ही बनी है, किन्तु उसे बाँध कर रखने के लिए जो आलम्बन आवश्यक है, वह इन तीन गुणों का ही आलम्बन है। प्रकृति के आधार से, उसके आश्रय से वह आत्मा हमारे आधीन है। वास्तव में प्रकृति भी ईश्वर की ही बनायी हुई है। ईश्वर द्वारा बनायी हुई प्रकृति का ही आश्रय लेकर वह आत्मा इस प्रकृति से बने शरीर के अन्दर आश्रय लेकर रहती है।

जैसे आप कोई बहुत सुन्दर मोटर कार ले कर आये परन्तु आपको वाहन चलाना नहीं आता है। आप उसके लिए एक वाहन-चालक को नियुक्त करेंगे। वह जैसा वाहन चलाएगा, उसके अच्छे-बुरे, समस्त कर्मों का फल आपको ही भोगना पड़ेगा। यदि उसने वाहन अच्छी तरह से चलाया तो आप सही स्थान पर, सही समय पर पहुँच जायेंगे किन्तु यदि उसने वाहन ठीक से नहीं चलाया और कोई दुर्घटना हो गयी तो चालक का दोष होने पर भी भुगतना आपको पड़ेगा।

यह बात यदि समझ में आ जाए तो आत्मा को विमुक्त करने हेतु इन तीनों बन्धनों से मुक्ति पाना ही उसका मार्ग है।

सत्त्वगुण से भी ऊपर उठा जा सकता है जिसे गुणातीत कहते हैं। 'गुण+अतीत' अर्थात् गुण जो पीछे छूट गये। अतीत का अर्थ भूतकाल होता है। गुणातीत अर्थात् गुणों का पीछे छूट जाना, जैसे जब हम एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी पर चढ़ते हैं तो पिछली सीढ़ी से पैर उठाना पड़ता है तभी हम ऊपर की सीढ़ी पर चढ़ पाते हैं। जब तक पिछली सीढ़ी छूटती नहीं, अगली सीढ़ी पर पहुँचना असम्भव है। उसी प्रकार हमें अपने अन्दर अधिक मात्रा में उपस्थित तमोगुण को छोड़ना पड़ेगा, तभी हम रजोगुण में प्रवेश करेंगे। अधिक मात्रा का रजोगुण छोड़कर हम सत्त्वगुण की ओर बढ़ेंगे। फिर एक दिन ऐसा आता है जब सत्त्वगुण को भी पीछे छोड़कर हम गुणातीत बन जाते हैं। तब जाकर हमारी आत्मा भगवद्पादों में विलीन होती है।

**जन्म-मृत्यु का खेल समझ में आ जाए तो हमारा यह प्रवास तमोगुण से रजोगुण, फिर रजोगुण से सत्त्वगुण और अन्ततः गुणातीत होने की यात्रा भी समझ में आ जाएगी।**

इसे और अच्छी तरह से समझने के लिए रामायण के तीन पात्र- विभीषण, रावण और कुम्भकरण को ध्यान में रखना पड़ेगा। रामायण में सत्त्व गुणों से सम्पन्न हैं विभीषण। श्री हनुमान जी जब लङ्का में पहुँचे तो हर स्थान पर राजसी और तामसी कार्य चल रहा था। वे रात्रि में पहुँचे थे तो उन्होंने भोग-विलास में रङ्गी लङ्का देखी किन्तु ब्रह्ममुहूर्त से ठीक पहले उन्होंने देखा की एक द्वार

खुला और एक सात्त्विक दिखने वाला व्यक्ति बाहर तुलसी का पूजन करने लगा। हनुमान जी के लिए लङ्का में यह अनोखा दृश्य था। इसलिए वे सब से पहले विभीषण से मिले। विभीषण सत्त्वगुणी है, वह बार-बार अपने भाई को समझा रहा है कि जो तुम कर रहे हो, वह ठीक नहीं है।

उन्हीं का एक और भाई है। यह आवश्यक नहीं है कि एक माता की सभी सन्तानें एक सी हों। हमारा प्रशिक्षण, हमारी सङ्गत, हमारा अध्ययन, हमारी आदतें आदि किस प्रकार की हैं, इस पर हमारा व्यक्तित्त्व निर्भर करता है।

रावण का जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ है किन्तु वह अहङ्कार से बहुत अधिक उन्मत्त है। इसकी एक बहुत सुन्दर कथा है।

रावण प्रतिदिन अपनी माता को प्रणाम करने जाता था परन्तु एक दिन उसे तैयार होने में थोड़ा समय लग गया। वह अपनी माता को प्रणाम करने गया तो उसे पता लगा कि माता पूजा करने चली गई हैं। वह अपनी माता के पीछे-पीछे मन्दिर की ओर दौड़ा। वह वहाँ पहुँचा और बोला कि इतनी शीघ्रता क्या थी? माता ने उत्तर दिया कि मैं तो अपने समय से ही आयी हूँ। भगवान् महादेव का श्रावण माह चल रहा है और मैं उनकी आराधना करना चाहती हूँ इसीलिए प्रतिदिन पूजा करती हूँ। इस पर रावण ने कहा कि "माता तुम्हारे पास मेरे जैसा परम प्रतापी पुत्र है, बताओ तुम्हें क्या चाहिए?" इस पर माता ने कहा कि मैं मृत्यु के उपरान्त कैलाशवासी होना चाहती हूँ। महादेव, माता पार्वती, गणेश तथा कार्तिकेय के दर्शन करना चाहती हूँ। नन्दीकेशवर जी के दर्शन करना चाहती हूँ। रावण ने कहा कि मरने की बातें न करो माँ। यदि तुम्हें महादेव के दर्शन चाहिए तो मैं तुम्हें अभी उनके दर्शन करा दूँगा, तुम मेरे साथ चलो। माँ ने कहा कि अभी तो सम्भव नहीं है। इस उम्र में इतनी दूर कैलाश पर्वत पर जाना बड़ा ही दुर्गम है। रावण ने कहा कि ठीक है, मैं महादेव के कैलाश को ही यहाँ ले आऊँगा। वह अपनी चतुरङ्ग सेना के साथ उत्तर की दिशा की ओर चल पड़ा। वह इतना प्रतापी था कि कुबेर को जीतकर उसका पुष्पक विमान लेकर आ गया। इन्द्र आदि देवताओं को अपने पाँव के नीचे दबाकर रखता है। उन्हें अपने कारागार में बन्द करके रखा है। उसने वेदों की ऋचाएँ लिखी हैं। रुद्रवीणा नामक वाद्य यन्त्र ऐसा बजाता था कि सारी प्रकृति स्तब्ध हो जाती थी। संस्कृत का, व्याकरण शास्त्र का विद्वान है, भाषा का विद्वान है।

उसने कैलाश पर्वत के नीचे खड़े होकर कहा, "मेरी माता को तुम्हारे दर्शन करने हैं, इसलिए मैं तुम्हें ले जा रहा हूँ।" उसने कैलाश पर्वत को उठा लिया। जब कैलाश पर्वत पर हलचल होने लगी तो महादेव के सभी गण दौड़ कर महादेव के पास पहुँचे। महादेव ध्यानस्थ थे। सभी गणों ने उनसे प्रार्थना की, कि हे महादेव! जागो, देखो कैलाश पर्वत पर यह कैसा भूचाल आ रहा है? महादेव ने अन्तर्दृष्टि से देखा कि यह तो रावण है।

महादेव ने एक पैर का अँगूठे से उस पर्वत को दबाना आरम्भ किया जिससे नीचे भार बढ़ने लगा। रावण समझ गया कि यह तो भगवान् शङ्कर ही कर सकते हैं। उसने धीरे-धीरे कैलाश पर्वत को नीचे रखा परन्तु हाथ निकालने वाला था कि उसके हाथ पर्वत के नीचे दब गए और लहूलुहान हो गए। तब उसे समझ में आया कि महादेव कुपित हो गये हैं। वह यह भी जानता था कि महादेव तो भोले शङ्कर हैं, उनकी थोड़ी भी आराधना कर दो तो वे प्रसन्न हो जाते हैं। रावण ने महादेव के लिए एक स्तोत्र की रचना की जिसे 'शिवताण्डवस्तोत्र' के रूप में जाना जाता है।

**जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितस्थले**
**गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।**
**डमड्डमड्डमड्डमनिनादवड्डमर्वयं**
**चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम ॥**

**जटा कटा हसम्भ्रम भ्रमन्निलिम्पनिर्झरी ।**
**विलोलवी चिवल्लरी विराजमानमूर्धनि ।**
**धगद्धगद्ध गज्ज्वलल्ललाट पट्टपावके**
**किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं ममं ॥**

**अगर्वसर्वमङ्गला कलाकदम्बमञ्जरी-**

**रसप्रवाह माधुरी विजृम्भणा मधुव्रतम् ।**
**स्मरान्तकं पुरातकं भावन्तकं मखान्तकं**
**गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकानतकं भजे ॥**

वाणी की शुद्धि के लिए यह अद्‌भुत स्तोत्र है। इसे बच्चों को सिखाना चाहिए। भगवान् ने प्रसन्न होकर रावण को अपने पास बुलाया और पूछा कि "तुझे क्या चाहिए?" रावण ने कहा कि "मेरी माँ आपके दर्शन की अभिलाषी है। कृपा करके मेरे माँ को सपरिवार दर्शन दीजिये।" महादेव ने रावण की माता को लङ्का पहुँच कर दर्शन दिये। उसे एक खड्ग दिया जिसका नाम चन्द्रहास था। यह पराक्रम रजोगुण से उत्पन्न होता है। इसलिए रावण रजोगुण का प्रतीक है।

स्वाभाविक रूप से जो राजा बनते हैं वे योग से भोग की ओर चलने लगते हैं। इसीलिए हमारे पूर्वज सदैव कहते रहे कि आपके पास चाहे जितना भी धन हो, आप सादगी से जीवनयापन करें। राजा जनक, छत्रपति शिवाजी महाराज जैसे भी अनेक राजा हुए। छत्रपति शिवाजी महाराज के लिए श्रीमन्त योगी जैसा शब्द प्रयोग किया गया है।

रावण का तीसरा भाई कुम्भकरण तमोगुण का प्रतीक है। वह छः महीने तक सोता है। इस प्रकार तीनों भाइयों द्वारा तीनों गुणों को समझना आसान है। कुम्भकरण आसुरी सम्पदा से युक्त है।

**14.11**

**सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्, प्रकाश उपजायते।**
**ज्ञानं(म्) यदा तदा विद्याद्, विवृद्धं(म्) सत्त्वमित्युत॥14.11॥**

जब इस मनुष्यशरीर में सब द्वारों (इन्द्रियों और अन्तःकरण) में प्रकाश (स्वच्छता) और ज्ञान (विवेक) प्रकट हो जाता है, तब जानना चाहिये कि सत्त्वगुण बढ़ा हुआ है।

**विवेचन-** जिस समय देह में और अन्तःकरण में इन्द्रियों में चैतन्यता और विवेक-शक्ति उत्पन्न होती है, इसमें आभा छाने लगती है। आप तेजस्वी दिखने लगते हैं। हमारे शरीर में नव द्वार हैं- दो नासिका-पुट हैं, दो नेत्र हैं, एक मुख है, दो कान हैं और उत्सर्जन के दो द्वार हैं। अन्तःकरण को दसवाँ द्वार कहा गया है।

आपने अनुभव किया होगा कि जब आप कभी किसी से मिलते हैं और उनसे आँख में आँख मिलाते ही प्रतीत होता है कि वे कितने सरल हैं। किसी की आँखों को देखकर लगता है कि वे बड़े कुटिल होंगे। आँखों से ही पता चल जाता है कि वे आलसी होंगे। आँखों से ही प्रकाश बाहर निकलता है और पता चलता है कि व्यक्ति किस गुण के व्यक्ति हैं। आपकी विवेक-शक्ति से, आपकी चेतना से प्रकाश का उत्पन्न होना आरम्भ होता है। आपका देह जो पञ्चकोशों से बना है- अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश प्रफुल्लित होने लगते हैं। हमें किसी के पास बैठने में बड़ा आनन्द आता है, अच्छा लगता है। किसी के पास बैठने से ऐसा लगता है कि कब यहाँ से निकलें। मन ही नहीं होता कि उनके पास बैठें। "मैं (स्वयं) कौन सी श्रेणी में हूँ" यह आप अपने मित्रों और सम्बन्धियों से ही पूछ लीजियेगा। "क्या आपको मेरे पास बैठने का मन करता है?" जो झूठ बोलें, उनसे मत पूछना। यदि उन्हें आपसे अपेक्षा होगी तो वे आपसे झूठ बोलेंगे।

यदि वास्तव में आपके अन्दर सत्त्वगुण जाग रहा है, आपका क्रोध कम हुआ, आपने प्रयासपूर्वक उसे कम किया, आप रजोगुण से बाहर निकले और सत्त्वगुणी बनने लगे, शान्त रहने लगे तो स्वाभाविक रूप से आपके आस-पास अलौकिक आभा छाने लगती है। विवृद्धम् अर्थात् वृद्धि होना, जैसे-जैसे सत्त्वगुण बढ़ने लगा, आपके आभामण्डल पर परिणाम दिखने लगता है। इसलिए प्रतिदिन योग का सहारा लें। कपालभाति करें। भा का अर्थ ही प्रकाश है। भारत का अर्थ होता है जो प्रकाश में रत है। वहीं से भारत शब्द निकला। यह सारे देह में प्रकाशित होने लगता है। कपालभाति से भाल तेजस्वी होने लगता है। जिनके चेहरे पर मुहाँसे हैं, उन्हें कपालभाति, सूर्य नमस्कार करना चाहिए। क्रीम लगाने से कुछ नहीं होगा। केवल पाँच प्राणायाम प्रतिदिन सात मिनट तक करें। कपालभाति में केवल जाने वाली श्वास पर ध्यान दिया जाता है, आने वाली श्वास पर नहीं।

भस्त्रिका में श्वास को लेते रहें और छोड़ते रहें। यह केवल चालीस- चालीस बार कर लें। इस प्रक्रिया को तीन-तीन बार दोहराएँ। कपालभाति के चालीस और फिर भस्त्रिका के चालीस, अनुलोम-विलोम में बाँयी नासिका से श्वास छोड़ो, दाँयी नासिका से श्वास लो। इनके तीन बार अभ्यास करें।

सुषुम्ना नाड़ी अर्थात् दोनों नाड़ियों से श्वास का चलना प्रतिदिन तीनों प्राणायाम- कपालभाति, भस्त्रिका, अनुलोम-विलोम करेंगे तो सुषुम्ना नाड़ी खुल जाती है। ऑक्सीजन स्तर बढ़ जाता है।

थोड़ी देर के लिए श्वास रुक जाती है, उसे कुम्भक कहते हैं। श्वास बाहर छोड़ कर रोक ली तो उसे बाह्य कुम्भक और श्वास अन्दर ही थोड़ी देर रोक ली तो उसे आन्तरिक कुम्भक। एक स्थम्भ कुम्भक भी होता है। वह बहुत आगे की स्थिति है। केवल पाँच मिनट प्रतिदिन अभ्यास करें।

उसके बाद प्रणव उच्चारण करें- दीर्घ ॐ। लम्बी गहरी श्वास भरकर एक मिनट तक करें। आरम्भ में पन्द्रह सेकेन्ड, बीस सेकेण्ड, फिर-एक मिनट तक उच्चारण करें गहरी लम्बी श्वास लेकर।

फिर भ्रामरी प्राणायाम- दोनों कानों में अँगूठा डालकर, आँखें बन्द कर इसका अभ्यास करें। भ्रामरी में मुँह नहीं खोला जाता, कण्ठ से भँवरे के गुञ्जन की ध्वनि की जाती है। आपका कपाल प्रकाशित होने लगता है। भ्रमर का अर्थ है भँवरा।

श्रीमद्भगवद्गीता योग का शास्त्र है। यह यम, नियम बड़ी विस्तृतता से समझाता है। आसन केवल एक या दो श्लोक में समाप्त हो जाते हैं। प्राणायाम दो श्लोकों में समाप्त हो जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता विशेषतः प्रत्याहार बताती है, ध्यान, धारणा का ज्ञान देते हुए समाधि तक पहुँचाती है। इसीलिए अध्याय के अन्त में हम पुष्पिका कहते हैं।

**"ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रहमविद्यायाँ योगशास्त्रे"**

यह योग का शास्त्र है, विज्ञान है। विश्व में इससे बड़ा विज्ञान कोई नहीं है। हमें इस मार्ग पर चलने का प्रयास निरन्तर करना है।

**14.12**

**लोभः(फ्) प्रवृत्तिरारम्भः(ख्), कर्मणामशमः(स्) स्पृहा।**
**रजस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे भरतर्षभ॥14.12॥**

हे भरतवंशमें श्रेष्ठ अर्जुन ! रजोगुण के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, कर्मोंका आरम्भ, अशान्ति और स्पृहा -- ये वृत्तियाँ पैदा होती हैं।

**विवेचन-** श्रीभगवान् कहते हैं, "हे भरतकुल में जन्म लेने वाले अर्जुन! अपने कुल की परम्परा को याद करो।" श्रीभगवान् जब-जब अर्जुन को सम्बोधित करते हैं, वहाँ कोई न कोई बात इङ्गित है। "हे अर्जुन! अपने कुल के पूर्वजों को याद करो। वे सब एक से बढ़कर एक योगी थे।" रजोगुण के बढ़ने पर मनुष्य की लोभ-प्रवृत्ति बढ़ने लगती है। सकाम भाव से कर्मों का आरम्भ होगा और उसी से अशान्ति बढ़ती है। सब भोगों के प्रति खिंचाव आदि वृत्तियाँ उत्पन्न होने लगती हैं। बच्चों में भी होता है। "मेरा पहला नम्बर आना चाहिए," पहला नम्बर यानि पराक्रम। पहले नम्बर की आकाङ्क्षा से कार्य करेगा तो मन में अशान्ति तो आएगी ही। इसीलिए श्रीभगवान् कहते हैं फल की आकाङ्क्षा को त्यागकर काम करो। जो बालक ज्ञान प्राप्ति के उद्देश्य से पढ़ाई करता है उसका पहला नम्बर तो आता ही है। जो लोभ करता है, सकाम भाव से पढ़ाई करता है, "शेयर में पैसा लगाया, इतने पैसे तो मिलने ही चाहिए" तो आपकी शान्ति भङ्ग हो जाएगी। रजोगुण, विषय-भोगों की लालसा उत्पन्न करेगा। श्रीभगवान् कहते हैं, "मुझे वे लोग प्रिय हैं, जो कोई अपेक्षा, आकाङ्क्षा नहीं रखते- **"अनपेक्ष, शुचिर्दक्ष।"**

जिस प्रकार ग्यारहवें श्लोक में बताया गया है कि रज और तम पर विजय प्राप्त करके सत्त्वगुण की प्राप्ति होगी तो ऐसा प्रतीत होगा जैसे वसन्त ऋतु में पुष्प पल्लवित होते हैं और उनकी सुगन्ध चारों ओर फैलने लगती है। वैसे ही ज्ञान का प्रकाश तीव्र गति से चेहरे पर दिखने लगता है।

**14.13**

**अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च, प्रमादो मोह एव च।**
**तमस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे कुरुनन्दन॥14.13॥**

हे कुरुनन्दन! तमोगुण के बढ़ने पर अप्रकाश, अप्रवृत्ति तथा प्रमाद और मोह – ये वृत्तियाँ भी पैदा होती हैं।

**विवेचन-** हेअर्जुन! तमोगुण के बढ़ने पर अप्रकाश अर्थात् अन्धकार छा जायेगा। हम अन्धेरे में चलने वाले कीड़े बन जायेंगे। कर्तव्यकर्मों में अप्रवृत्ति व प्रमाद तथा निद्रा आदि अन्तःकरण की मोहिनी प्रवृतियाँ उत्पन्न हो जायेंगी। कुछ भी करने का मन नहीं करेगा। सोने का, पड़े रहने का व आराम करने का मन होने लगेगा। मन में विचार आयेगा कि मेरे पास बहुत सम्पत्ति है। मेरी सात पीढ़ियाँ बैठकर खायेंगी। पिछली पीढ़ी को सदैव अगली पीढ़ी को पराक्रम का सन्देश देना चाहिए। नई पीढ़ी को उनके पैरों पर खड़ा होने का अभ्यास कराना अनिवार्य है। अतः स्नातक की उपाधि मिलने के पश्चात हमें अपने बच्चों को पारिवारिक व्यवसाय में जोड़ने से पहले कम से कम वर्षभर तक नौकरी करने के लिये कहना चाहिये।

वह इतना परिश्रम कर लेगा। उसको कुछ रूपये देकर भेज देना चाहिये। परिश्रम करने की प्रवृत्ति की ओर अग्रसर करना चाहिए। विवेचक जी ने स्वयं का उदाहरण देते हुए बताया कि उनके पिताजी बहुत बड़े व्यवसायी थे। उनकी सम्पति इतनी थी कि सात नहीं पचास पीढियाँ बैठकर खा सकती थीं। जब विवेचकजी स्वतः उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु विश्वविद्यालय गये तो उन्होंने पत्र द्वारा अपने पिताजी से मोटर साइकल लेने की इच्छा व्यक्त की। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनकी इच्छा अवश्य पूर्ण होगी। जब पिताजी ने पत्र का उत्तर भेजा तो विवेचक महोदय ने अपने मित्रों के समक्ष उसे खोला क्योंकि उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनके पिता उनकी इच्छा को टालेंगे नहीं। उन्होंने वाहन का मूल्य, कम्पनी का नाम इत्यादि लिख कर भेजा था। मात्र डीडी प्राप्त करना था तथा मोटरसाइकल लेकर लानी थी। जब उन्होंने पत्र खोलकर देखा तो उसमें जन्मदिवस की शुभकामनायें थीं व आगे पिताजी ने पूछा था कि विश्वविद्यालय तथा छात्रावास में अधिक दूरी न होने के बाद भी उनके पुत्र को मोटर साइकल की आवश्यकता क्यों पड़ गयी। इसके साथ ही उन्होंने वही साइकल वर्ष भर और चलाने का परामर्श दिया तथा प्राङ्गण के तरणताल में तैराकी का व्यायाम करने हेतु जो सदस्यता चाहिए वह पूर्ण करने की इच्छा प्रगट की। पूर्ण वर्ष विवेचक जी ने साइकिल ही चलाई। जब उनका स्नातक पूर्ण हुआ तो पिताजी ने किसी और कार्यालय में नौकरी् करने के लिये कहा। उन्होंने एक वर्ष तक कार्य किया। उसके बाद ही विवेचकजी को अपने व्यवसाय में प्रवेश मिला। पराक्रम की आदत डालने से ही निद्रा व आलस्य में कमी आती है।

**14.14**

**यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु, प्रलयं(म्) याति देहभृत्।**
**तदोत्तमविदां(म्) लोकान्, अमलान्प्रतिपद्यते॥14.14॥**

जिस समय सत्त्वगुण बढ़ा हो, उस समय यदि देहधारी मनुष्य मर जाता है (तो वह) उत्तमवेत्ताओं के निर्मल लोकों में जाता है।

**विवेचन**-जब मनुष्य सत्त्वगुण की ओर वृद्धि करते हुये मृत्यु को प्राप्त होता है तब वह उत्तम कर्म करने वालों के समान्, दिव्य स्वर्ग लोक को प्राप्त होता है। जब घर में समृद्धि हो तथा अतिथि आये तो बहुत अच्छा लगता है है किन्तु निर्धनता के काल में यदि कोई आ जाये तो स्थिति खेदपूर्ण हो जाती है। इसी प्रकार जब हम सत्वगुण से परिपूर्ण हैं और उस क्षण यदि मृत्यु आ जाये तो उससे अच्छी मृत्यु कोई नहीं है। साथ ही जिस प्रकार के प्रकाशमान स्थान पर वह मृत्यु उपरान्त पहुँचता है उसी प्रकार के प्रकाशमान स्थान को पुनः अगले जन्म में प्राप्त करता है। संसार में नब्बे प्रतिशत व्यक्ति सामान्य हैं। वे न तो पुण्य करते हैं न पाप। वे जन्म तथा मृत्यु के चक्र में घूमते रहते हैं किन्तु कुछ व्यक्ति होते हैं जो महासत्त्वगुणी होते हैं जिन्हें थोड़ा रुकना पड़ता है क्योंकि उनके सत्कर्मों के कारण उनके अगले जन्म में वैसी ही परिस्थितियाँ मिलें। ये पावन आत्माएँ, कुछ काल तक विचरण करती हैं। इस प्रकार से पाप आत्मायें भी भूत-प्रेत आदि योनियों में विचरण करती रहती हैं। इस प्रकार की आत्माएँ हमें कार्यों में सहायता करने का प्रयत्न करती हैं तथा कभी-कभी हमारे द्वारा अनुचित कार्य भी करवाती हैं। यदि हम डरपोक हैं तो हम करना आरम्भ भी कर देते हैं। सात्विक तथा पापी दोनों की ही सङ्ख्या कम है किन्तु सामान्य की अधिक है।

**14.15**

**रजसि प्रलयं(ङ्) गत्वा, कर्मसङ्गिषु जायते।**
**तथा प्रलीनस्तमसि, मूढयोनिषु जायते॥14.15॥**

रजोगुण के बढ़ने पर मरने वाला प्राणी कर्मसंगी मनुष्य योनि में जन्म लेता है तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरने वाला मूढ़ योनियों में जन्म लेता है।

**विवेचन**- रजोगुण के बढ़ने पर यदि मृत्यु आ जाये, तो कर्मों की आसक्ति वाले मनुष्यों में उत्पत्ति होती है। तमोगुण के बढ़ने के पश्चात वह मूढ़ योनि में अर्थात् कीट- पतङ्गों की योनि में उत्पन्न होता है। जिस प्रकार वर्षा के पश्चात् आयी घास को बकरी खा कर समाप्त कर देती है उसी प्रकार राजसी व्यक्ति मात्र उपभोग में लग जाता है।

एक मारवाड़ी व्यक्ति था। मारवाड़ी प्रवृत्ति के अनुरूप उसके रक्त में ही व्यवसाय था। एक बार वह विमान द्वारा चीन देश जा रहा था। उसके साथ वाले स्थान पर एक चीनी व्यक्ति बैठा था। वहाँ एक मक्खी कहीं से आ गयी जिसे चीनी व्यक्ति ने पकड़ा और खा लिया। मारवाड़ी व्यक्ति ने देखा तो उसे आश्चर्य हुआ। कुछ समय पश्चात् एक और मक्खी आयी किन्तु अब वह मारवाड़ी के हाथ पर बैठी तो उसने अनायास ही उसे पकड़ लिया। पास बैठ चीनी व्यक्ति से उसने पूछा, खरीदोगे ? कितने में खरीदोगे ?" उस मारवाड़ी व्यक्ति को यात्रा में भी व्यवसाय दिख गया। राजसी व्यक्ति कभी शान्त नहीं बैठे सकता है।

इसी प्रकार, यदि किसी भिक्षुक को एक रात्रि के लिये महल में भी ले जाया जाये तो भी वह वहाँ विश्रान्ति से नहीं रह सकता है। उसके माँगकर बासी खाने में ही आनन्द आता है। यदि बैल को बारात में ले जाया जाये तो भी वह मिष्ठान नहीं खायेगा। वहाँ भी वह घास ही खायेगा। इसी प्रकार से तमोगुणी को सत्वगुणों का महत्त्व ज्ञात नहीं होता। उसे इस आनन्द की अनुभूति ही नहीं है। हम गीताजी सीख रहे हैं। हमारे आस-पास कई व्यक्ति ऐसे होते हैं जो हमें पागल समझते हैं। उनका मानना है कि कहाँ गीता समय व्यतीत कर रहे हो, जीवन का आनन्द लो।

**भस्मीभूतस्य देहस्य पुनमरागमनं कुतः ।।**

एक बार जीवन पूर्ण होने के बाद यह शरीर भस्मीभूत हो जाने पर वापस कहाँ आना है?

ऐसा सोचने वाले व्यक्तियों की अधोगति सुनिश्चित है। सूअर को कीचड़ तथा गन्दगी में ही आनन्द आता है। हमें उसे देखकर घृणा होती है किन्तु वह स्वयं आनन्दित होता है। ऐसी ही प्रवृत्ति मूढ़ योनि में जन्म लेने वाले तमोगुणी जीव की होती है।

**14.16**

**कर्मणः(स्) सुकृतस्याहुः(स्), सात्त्विकं(न्) निर्मलं(म्) फलम्।**
**रजसस्तु फलं(न्) दुःखम्, अज्ञानं(न्) तमसः(फ्) फलम्॥14.16॥**

विवेकी पुरुषों ने – शुभ कर्म का तो सात्त्विक निर्मल फल कहा है, राजस कर्म का फल दुःख (कहा है और) तामस कर्म का फल अज्ञान (मूढ़ता) कहा है।

**विवेचन**- श्रेष्ठ कर्मों का फल - सुख, ज्ञान और वैराग्य होता है।

जितनी हम सुख की अपेक्षा करेंगे उतना ही दुःख मिलेगा। सुख का अन्तिम छोर दुःख है।

एक बार बच्चों से प्रश्न पूछा गया कि आनन्द का विलोम बताओ। बच्चों ने कहा दुःख तो उन्हें बताया गया कि यह सुख का विलोम है। दिनभर क्रिकेट खेलना सुख है किन्तु परीक्षा में कम अङ्क पाना दुःख है। दिनभर खेलकर जो सुख प्राप्त हुआ उसका प्रतिफल कम अड़क आने से दुःख में परिवर्तित हो गया।

दिनभर वातानुकूलित कक्ष (A.C.) में बैठे रहोगे तो सुख प्रतीत होता है किन्तु बाद में हड्डियां अकड़ गयीं तो दुःख मिला।

जितना सुख के पीछे भागेंगे, उतना ही दुःख आयेगा। किसी दूसरे बच्चे ने आनन्द के विलोम का उत्तर 'खेद' दिया, किन्तु खेद भी अनुचित था। खेद का अर्थ होता है- क्षणिक दुःख की अनुभूति। हर्ष का अर्थ होता है क्षणिक सुख की अनुभूति अतः खेद, हर्ष का विलोम हुआ न कि आनन्द का।

आनन्द का कोई विलोम नहीं है। इसीलिये सन्त तुकाराम महाराज कहते हैं -

**आनंदाचे डोही आनंदतरंग**

एक बार उस आनन्द में उतर जाओ तो आनन्द की ही तरङ्गे निकलेंगी।

भगवद् नाम का आनन्द ही भक्त का आनन्द है। इस आनन्द का कोई छोर नहीं है। यह अनन्त है।

सुख सदैव दुःख की ओर जाता है। अपेक्षा सदैव निराशा की ओर ले जाती है। तामस कर्मों का फल सदैव ही दुःख है। ऐसे व्यक्ति अज्ञान से ही जीते हैं तथा अज्ञान में ही मर जाते हैं।

विज्ञान का विपरीत शब्द है अज्ञान किन्तु ज्ञान का कोई विपरीत शब्द नहीं है।

विज्ञान बदलता रहता है किन्तु ज्ञान कभी नहीं बदलता है। इसलिये सत्व गुण में ही जीयें तथा इनसे भी ऊपर उठने का प्रयास करें।

**14.17**

**सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं(म्), रजसो लोभ एव च।**
**प्रमादमोहौ तमसो, भवतोऽज्ञानमेव च॥14.17॥**

सत्त्वगुण से ज्ञान और रजोगुण से लोभ (आदि) ही उत्पन्न होते हैं; तमोगुण से प्रमाद, मोह एवं अज्ञान भी उत्पन्न होते हैं।

**विवेचन**- सत्त्वगुण से ज्ञान की प्राप्ति होती है।

रजोगुण से लोभ की प्राप्ति होती है।

तमोगुण से प्रमाद, मोह, अज्ञान की प्राप्ति होती है। यदि इनसे ऊपर उठना है तो सत्व गुण की साधना करनी पड़ेगी।

**14.18**

**ऊर्ध्वं(ङ्) गच्छन्ति सत्त्वस्था, मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।**
**जघन्यगुणवृत्तिस्था, अधो गच्छन्ति तामसाः॥14.18॥**

सत्त्वगुण में स्थित मनुष्य ऊर्ध्वलोकों में जाते हैं, रजोगुण में स्थित मनुष्य मृत्युलोक में जन्म लेते हैं (और) निन्दनीय तमोगुण की वृत्ति में स्थित तामस मनुष्य अधोगति में जाते हैं।

**विवेचन**- गैस को गुब्बारे को ऊपर उठाने के लिये धागे का बन्धन तोड़ना होगा। बन्धन क्या है - लोभ का, क्रोध का, रजोगुण का, तमोगुण का बन्धन। श्रीभगवान् कहते हैं सत्वगुणी की गति उर्ध्व है। वे स्वर्ग को प्राप्त करेंगे।

रजोगुणी की गति मध्यम है। वे पुनः मनुष्य योनि में पृथ्वीलोक पर आयेंगे।

**पुनरपि जननं, पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनं ।।**

बारम्बार जनम-मरण के चक्र में घूमते रहेंगे।

तमोगुणी की गति अधोगति है। वह पतन की ओर ले जायेगी अतः निद्रा, प्रमाद व आलस्य से बचना। क्रोध से बाहर निकल सजगता को बढ़ाना है। क्रोध का अर्थ है - मेरे अन्तर्मन का सो जाना। क्रोध में विवेक खो जाता है।

नित्य रात्रि में अवलोकन करें कि आज कितना क्रोध किया। भगवान् से क्षमा माँगें तथा उनसे प्रार्थना करें कि क्रोध के क्षण में भी उनका स्मरण हो जाये।

यदि क्रोध आने पर शीघ्र भगवान् का स्मरण नहीं भी आये, कुछ समय पश्चात आये तो भी उसी क्षण से भगवान् का नाम स्मरण करना प्रारम्भ कर दो।

रात्रि में भी स्मरण आ जाये तो रात्रि में ही नाम स्मरण करके विनती करो कि आगे से क्रोध आने से पहले ईश्वर का स्मरण हो जाये।

एक सप्ताह में ही क्रोध आते ही ईश्वर का स्मरण होने लगता है। पन्द्रह दिवस के पश्चात् तो क्रोध आने से पहले ही नामस्मरण प्रारम्भ होने लगता है।

**14.19**

**नान्यं(ङ्) गुणेभ्यः(ख्) कर्तारं(म्), यदा द्रष्टानुपश्यति।**
**गुणेभ्यश्च परं(म्) वेत्ति, मद्भावं(म्) सोऽधिगच्छति॥14.19॥**

जब विवेकी (विचार कुशल) मनुष्य तीनों गुणों के (सिवाय) अन्य किसी को कर्ता नहीं देखता और (अपने को) गुणों से पर अनुभव करता है, (तब) वह मेरे सत्स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।

**विवेचन**- यह इस अध्याय का सबसे महत्वपूर्ण श्लोक है।

पहले हमने देखा सत्वगुणी स्वर्ग में जायेगा। रजोगुणी जन्म-मरण के चक्र में रहेगा तथा तमोगुणी मूढ योनि में जायेगा किन्तु उससे ऊपर की भी एक दशा है।

सत्वगुण से ऊपर की दशा को गुणातीत कहते हैं।

जिस समय हम द्रष्टा बन तीनों गुणों से ऊपर उठना आरम्भ करते हैं तथा सच्चिदानन्द के उस मूल तत्व का ज्ञान प्राप्त करना आरम्भ करते हैं, तब श्रीभगवान् कहते हैं कि वह मेरे स्वरूप को प्राप्त कर लेता है। गुणातीत बन जाता है। गुणातीत किसको कहते हैं?

**14.20**

**गुणानेतानतीत्य त्रीन्, देही देहसमुद्भवान्।**

**जन्ममृत्युजरादुःखैः(र्), विमुक्तोऽमृतमश्नुते॥14.20॥**

देहधारी (विवेकी मनुष्य) देह को उत्पन्न करने वाले इन तीनों गुणों का अतिक्रमण करके जन्म, मृत्यु और वृद्धावस्था रूप दुःखों से रहित हुआ अमरता का अनुभव करता है।

**विवेचन** - ऐसे पुरुष शरीर की उत्पति के फलस्वरूप इन तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके जन्म, मृत्यु, जरा तथा दुःख से ऊपर उठकर मुक्त होकर मुझे प्राप्त करते हैं।

यह कैसे घटता है ?

वह जो मृत्यु का क्षण है, प्रलय का क्षण है वह आपके अभ्यास पर निर्भर करेगा कि आपकी मृत्यु के समय आपके साथ घटनायें घटने वाली हैं।

यदि आपका अभ्यास मात्र दुःखों के कारण क्रन्दन करने का है तो आप रोते ही रहेंगे। अन्यथा, रोने के स्थान पर स्वयं को प्रफुल्लित दिखाओ, ईश्वर का धन्यवाद दो। जो मनुष्य देह की पीड़ा का पुनः पुनः स्मरण करेगा वह देह का हो, पीड़ा वाली देह को प्राप्त करेगा। मृत्यु के समय जब हमारी आत्मा हमारे शरीर से बाहर निकलेगी उस समय हमारे अन्तर्मन की अवस्था पर ही हमारा पुनर्जन्म निर्भर करेगा।

यदि मृत्यु के समय आपके मस्तिष्क में धन की चिन्ता है, कितना धन कहाँ जमा है, किसे दिया है, कितना दिया है, कब वापस लेना हैं, किससे कितना लेना है। यही सब चलता रहेगा किन्तु आप बोल नहीं पा रहे होगे तब धन की चिन्ता से जब मन पीड़ित रहेगा तो आपकी आत्मा अगले जन्म में भी धन के लोभ में ही लिप्त रहेगी।

धन महत्वपूर्ण है, किन्तु कितना ?
जितना आवश्यक हो, उतना ही। आवश्यकता से अधिक की चिन्ता करने की प्रवृत्ति अनुचित है।

वास्तविकता में किसी पीड़ा का अनुभव तब नहीं होता जब आप समझ लें कि, मैं शरीर नहीं हूँ, मैं आत्मा हूँ, तब उस पीड़ा का भान नहीं रहता है।

**14.21**

**अर्जुन उवाच**
**कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतान्, अतीतो भवति प्रभो।**
**किमाचारः(ख्) कथं(ञ्) चैतांस्, त्रीन्गुणानतिवर्तते॥14.21॥**

अर्जुन बोले – हे प्रभो! इन तीनों गुणों से अतीत हुआ मनुष्य किन लक्षणों से (युक्त) होता है? उसके आचरण कैसे होते हैं? और इन तीनों गुणों का अतिक्रमण कैसे किया जा सकता है?

**विवेचन**- अर्जुन श्रीभगवान् से पूछते हैं कि इन तीनों गुणों से अतीत पुरुष किन-किन लक्षणों से युक्त होता है?

किस-किस प्रकार के आचरण से युक्त होता है? किस उपाय से इन तीनों गुणों से अतीत हुआ जा सकता है ?

हम सबके मन में भी ये प्रश्न उठे होंगे। श्रीभगवान् ने अगले श्लोक में इसका उत्तर दे दिया कि जो व्यक्ति इन लक्षणों से ऊपर उठ जाता है, वह कैसा होता है।

**14.22**

**श्रीभगवानुवाच**
**प्रकाशं(ञ्) च प्रवृत्तिं(ञ्) च, मोहमेव च पाण्डव।**
**न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि, न निवृत्तानि काङ्क्षति॥14.22॥**

श्री भगवान बोले – हे पाण्डव! प्रकाश और प्रवृति तथा मोह – (ये सभी) अच्छी तरह से प्रवृत्त हो जायँ तो भी (गुणातीत मनुष्य) इनसे द्वेष नहीं करता और (ये सभी) निवृत्त हो जायँ तो (इनकी) इच्छा नहीं करता।

**विवेचन**- हे अर्जुन, जो व्यक्ति तीनों गुणों से मोहित होकर उनमें प्रवृत्त भी नहीं होता तथा उनसे निवृत्त होने के पश्चात् उनकी आकाङ्क्षा भी नहीं करता, वही व्यक्ति गुणातीत होने के पथ पर अग्रसर है। वह छोटी-छोटी बातों पर प्रसन्न भी नहीं हो रहा है अथवा द्वेष भी नहीं कर रहा है ।

ये आज पहले भी सुन चुके हैं -
**यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।**

हमें छोटी-छोटी बातों पर द्वेष होता है, क्रोध आता है। हमें स्वयं का अभ्यास करना चाहिये । हमें द्रष्टा बन स्वयं से पूछना चाहिये कि किस परिस्थिति में हमें क्रोध आता है? किस व्यक्ति को देखकर क्रोध आता है? कौन-से समय पर क्रोध आता है? किस घटना के घटने पर हमें क्रोध आता है ? मेरी मनःस्थिति कैसी रहती है जब मुझे क्रोध आता है? इस क्रोध का कारण क्या है?

हम अनुकूलता से ग्रस्त हैं। हमें इस अनुकूलता से बाहर आना होगा।

न प्रसन्न रहना होता है, न द्वेष करना है।

जिस परिस्थिति में श्रीभगवान् हमें रखेंगे, हम सन्तुष्ट रहेंगे, तभी हम योगी बन सकेंगे। बारहवें अध्याय में श्रीभगवान् ने बताया है
**सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।।**

हर परिस्थिति में सन्तुष्ट रहो। किसी भी रस में मत बहो।
**विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः। रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते। 2.59 ||**

अपनी इन्द्रियों को रस के भोगों से छुटकारा दिलवाना है वरना मन मात्र खाने-पीने में ही लगा हुआ है।

**14.23**

**उदासीनवदासीनो, गुणैर्यो न विचाल्यते।**
**गुणा वर्तन्त इत्येव, योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥14.23॥**

जो उदासीन की तरह स्थित है (और) (जो) गुणों के द्वारा विचलित नहीं किया जा सकता (तथा) गुण ही (गुणों में) बरत रहे हैं – इस भाव से जो (अपने स्वरूप में ही) स्थित रहता है (और स्वयं कोई भी) चेष्टा नहीं करता।

**विवेचन**- श्रीभगवान् कहते हैं, "जो साक्षी बन जाता है, जैसे न्यायालय में तृतीय व्यक्ति साक्ष्य देने पहुँच जाता है, उसी प्रकार स्वयं का साक्षी बन जाओ।" बाहर निकल कर स्वयं को देखो कि यह व्यक्ति कर क्या रहा है? सबसे पहले अपनी श्वास को देखो। कैसे जा रही है? मार्ग कैसा है? उष्ण है या शीत है? कहाँ तक पहुँच रही है? श्वासप्रेक्षा अर्थात् श्वास के प्रेक्षक बनो, दृष्टा बनो, साक्षी बनो। फिर धीरे-धीरे, जब **श्वासप्रेक्षा** का अभ्यास हो जाए, तब **सम्वेदनप्रेक्षा**- कहाँ पर खुजली आ रही है? ध्यान के लिए बैठते हैं तो खुजली अवश्य आती है। केवल देखो, कोई प्रतिक्रिया मत दो। पीड़ा हो तो उसकी भी कोई प्रतिक्रिया मत दो। ये सब अपने-आप चला जाएगा, तब जाकर मृत्यु के समय की पीड़ा भी स्वतः चली जाएगी।

इसके उपरान्त **विचारप्रेक्षा** करो। किस प्रकार से विचार आ रहे हैं? न उनका आग्रह है, न उनको आमन्त्रण है, न उनका स्वागत है, न उनका द्वेष है। इस प्रकार विचारों का साक्षी बनना है। विचलित नहीं होना है। उसमें फँसना भी नहीं है। धीरे-धीरे पता चलेगा कि जो गया, वह गया और आया कोई नहीं। बीच में एक हमारा मन शून्य बन जाता है। यही गुणातीत बनने का मार्ग है। मन में एक बार में एक ही विचार रहती है। यदि "मैं' रहेगा तो "वह" कभी नहीं आएगा। जिस क्षण "मैं" छूटेगा, उसी क्षण उसका अवतरण होगा।

**उतरो तम पथ पर ज्योति चरण**
**उतरो, उतरो, उतरो ।**
**तुम छिपे यहीं यमुना तट पर,**
**मोहन भरते मुरली का स्वर।**
**दो नवल रश्मि जग को जिससे,**
**अणु अणु आलोकित हो क्षण-क्षण।**
**उतरो उतरो उतरो।**

श्रीभगवान् का उतरना तभी सम्भव होगा जब "मैं" बाहर निकलेगा।

**14.24**

**समदुःखसुखः(स्) स्वस्थः(स्), समलोष्टाश्मकाञ्चनः।**
**तुल्यप्रियाप्रियो धीरः(स्), तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥14.24॥**

जो धीर मनुष्य सुख-दुःख में सम (तथा) अपने स्वरूप में स्थित रहता है; जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सोने में सम रहता है, जो प्रिय-अप्रिय में सम रहता है। जो अपनी निन्दा-स्तुति में सम रहता है; जो मान-अपमान में सम रहता है; जो मित्र-शत्रु के पक्ष में सम रहता है (और) जो सम्पूर्ण कर्मों के आरम्भ का त्यागी है, वह मनुष्य गुणातीत कहा जाता है। (14.24-14.25)

**विवेचन**- हमने बारहवें अध्याय में समत्व की बात बहुत विस्तार से सुनी। श्रीभगवान् कह रहे हैं, "सुख आए या दुःख आए, सुख में अधिक प्रसन्न नहीं होना है और दुःख में अधिक दुःखी नहीं होना है। हमें स्वर्ण मिल जाए या पत्थर, एक ही बात है। चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि सब यहीं छूट जाना है। प्रिय व्यक्ति हो या अप्रिय, कोई निन्दा कर दे या स्तुति कर दे, सबमें सन्तुलन बना कर रखो।

**14.25**

**मानापमानयोस्तुल्यः(स्), तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।**
**सर्वारम्भपरित्यागी, गुणातीतः(स्) स उच्यते॥14.25॥**

**विवेचन**- श्रीभगवान् कहते हैं, "गुणातीत तो उसी को कहते हैं जो मान और अपमान से भी ऊपर उठ गया।" कोई मान कर रहा है या अपशब्द बोल रहा है, जिह्वा उसकी खराब हो रही है, मैं अपने मन को खराब न करूँ। कोई स्तुति कर रहा है तब भी शान्त भाव रखो। शत्रु भी सामने से आ जाये तो भी अन्दर हलचल नहीं होनी चाहिए। जो भी काम मैंने किया, उसका बिलकुल भी अहङ्कार मन में नहीं रखो। जो इस भाव में जीते हैं, वे गुणातीत कहलाते हैं।

**14.26**

**मां(ञ्) च योऽव्यभिचारेण, भक्तियोगेन सेवते।**

**स गुणान्समतीत्यैतान्, ब्रह्मभूयाय कल्पते॥14.26॥**

और जो मनुष्य अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मेरा सेवन करता है, वह इन गुणों का अतिक्रमण करके ब्रह्म प्राप्ति का पात्र हो जाता है।

**विवेचन**- श्रीभगवान् कहते हैं, "जो व्यक्ति अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मेरा सेवन करता है, मेरी सेवा करता है, वह इन गुणों का अतिक्रमण करके ब्रह्म प्राप्ति की ओर बढ़ता है।" अव्यभिचारी बनो, निष्काम भक्ति करो, "मुझे कुछ नहीं चाहिए, मैं तो केवल आपका धन्यवाद करने के लिए बैठा हूँ। मेरे पात्रता नहीं है फिर भी आपने बहुत दे दिया है।परमात्मा ने आँखें दीं, कान दिये, पराक्रम की शक्ति दी, अच्छा परिवार दिया किन्तु हमारा ध्यान सदैव उस पर रहता है कि यह नहीं दिया, वह नहीं दिया। वह भक्ति व्यभिचारी भक्ति होती है।

हमें श्रीभगवान् के सम्मुख प्रेम की स्वीकृति के लिए अश्रु बहाते हुए बैठना चाहिए कि प्रभु मेरा प्रेम स्वीकार कीजिये। आप ध्यान से उनका चेहरा देखिये तो आपको पता चलेगा कि वे भी आपको देखकर मुसकुराते हैं। वे कभी-कभी क्रोधित होकर भी देखते हैं। आप कभी ध्यान से देखते ही नहीं हैं।

**14.27**

**ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहम्, अमृतस्याव्ययस्य च।**
**शाश्वतस्य च धर्मस्य, सुखस्यैकान्तिकस्य च॥14.27॥**

क्योंकि ब्रह्म का और अविनाशी अमृत का तथा शाश्वत धर्म का और ऐकान्तिक सुख का आश्रय मैं (ही हूँ)।

**विवेचन**- श्रीभगवान् कहते हैं, "ब्रह्म का और अविनाशी अमृत का तथा शाश्वत धर्म का और एकान्तिक सुख का आश्रय केवल मैं हूँ। तुझे अविनाशी अमृत प्रदान करने का कार्य मैं करूँगा। तुझे अविनाशी बना दूँगा। तुझे अमृत तत्त्व में ले जाऊँगा। फिर जन्म और मरण सम्भव नहीं रहेगा, लेकिन तेरे अन्दर इस प्रकार की भक्ति का उदय हो जाए, तू तमोगुण से ऊपर उठकर सत्त्वगुण में आ, रजोगुण से ऊपर उठकर सत्त्वगुण में आ और फिर उसको भी छोड़कर गुणातीत बन जा। समत्व के भाव को अपना ले। फिर तेरे अन्दर जो भक्ति उठेगी, वह भक्ति वास्तव में तुझे अमृतत्व के पास ले जाएगी।"

इसी के साथ आज के विवेचन सत्र का समापन हुआ तथा प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

**प्रश्न एवं उत्तर**

**प्रश्नकर्ता** - पलक दीदी
**प्रश्न** - कभी कभी मन इतना विचलित रहता है कि न कुछ करने की इच्छा होती है, न किसी से बात करने की, ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिए ?
**उत्तर** - यह बहुत स्वाभविक है और सब के साथ ऐसी स्थिति आती है। जब मन वृत्तियों की ओर खिंचा चला जाता है तो मन में उदास भाव उत्पन्न होता है। इसका मुख्य उपचार प्राणायाम ही है। आज के सत्र में पाँच प्रकार के प्राणायाम सीखे, उनका अभ्यास प्रतिदिन करें, भगवान का नाम लेते लेते, लम्बी गहरी साँस लें और उसी गहराई से छोड़ें। कुछ न करने की भावना तब पैदा होती है जब शरीर में प्राण की शक्ति कम हो जाती है, अतः प्राण का आयाम करना अनिवार्य है, इसी से नकारात्मक विचार दूर होते हैं।

**प्रश्नकर्ता** - विद्यासागर भैया
**प्रश्न** - श्रेयस और प्रेयस क्या है?
**उत्तर** - हम इस संसार में अकेले नहीं हैं। हमारा परिवार, मित्र, कार्यालय के साथी, समाज से भी हम जुड़े हैं। जब हम सबके कल्याण का विचार करते हैं और उसी दिशा में कार्य करते हैं तो वह श्रेयस है। कुछ कार्य केवल हम अपने स्वार्थ के लिए करते हैं, जो हमें प्रिय लगें। इन दोनों में समत्व लाना आवश्यक है। जो ऐसा कर पाता है वह यशस्वी बनता है। श्रेयस सर्वकल्याणकारी

होता है और प्रेयस स्वयं के लिए कल्याणकारी होता है। प्रेयस में भी दो प्रकार होते हैं - ऊर्ध्वगति और अधोगति। शराब पीना अधोगति प्रेयस है। यह विचार सदैव रखें कि आपका कौन सा प्रिय कार्य आपके लिए हितकारी है। इस विवेक से कार्य करने पर आपका प्रेयस आपके लिए श्रेयस्कर सिद्ध होता है।

**प्रश्नकर्ता** - मनीषा दीदी
**प्रश्न** - भगवान का दर्शन क्यों नहीं होता?
**उत्तर -** भगवान प्रतिपल हमें दर्शन देते हैं पर हमने ही आँखें बन्द कर रखी हैं। हमारे इर्द गिर्द जो कुछ भी घट रहा है वह उसके आदेश से ही हो रहा है।

**प्रतिपल निज इन्द्रिय समूह से,**
**जो कुछ भी आचार करूँ,**
**केवल तुझे रिझाने को बस,**
**तेरा ही व्यवहार करूँ।**

**जीवों का कलरव जो,**
**दिनभर सुनने में मेरे आवे,**
**तेरा ही गुणगान जान,**
**मन प्रमुदित हो अति सुख पावे।**

भगवान सर्व व्याप्त हैं। जब हम उनको हर जीव में देखने लगते हैं तो उन्हें जान पाते हैं। गणेश जी का विसर्जन, उनका विस्तृत सृजन होता है। जो गणेशजी अभी तक मूर्ति में थे अब वे जल में विस्तृत हो गए। पानी भी गणेशमय हो गया, खेत खलिहान, धान भी गणेशमय हो गया। वह धान भी जिसके घर गया, किसके मुख में गया वह भी गणेशमय बन गया। यह भाव ही विभूति योग है, विश्वरूप दर्शन है। इसी भाव को अपने मन में रखें तो वह बाहर भी झलकता है।

**ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्याय:।।**

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'गुणत्रयविभागयोग' नामक चौदहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

---

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

**https://vivechan.learngeeta.com/feedback/**

**विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!**
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

**जय श्री कृष्ण !**
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

**हर घर गीता, हर कर गीता!**
Let’s come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

**https://gift.learngeeta.com/**

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

**https://vivechan.learngeeta.com/**

**|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||**
**||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||**